इकाई 33 गुप्तकालः अर्थव्यवस्था, समाज और राजतंत्र

इकाई की रूपरेखा

33.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरान्त आपः

- गुप्तकालीन प्रशासन के विभिन्न पहलुओं के बारे में जान सकेंगे।
- यह समझ सकेंगे की गुप्तकाल में कृषि, कारीगर उत्पादन और व्यापार की क्या स्थिति थी।
- गुप्तकालीन सामाजिक स्थिति के सन्दर्भ में जानकारी हासिल कर सकेंगे, और
- इस काल में जो परिवर्तन आर्थिक व सामाजिक स्थिति में हुए, उनको समझ सकेंगे।

33.1 प्रस्तावना

हमने पहले आपको गुप्तकालीन (इकाई 32) राजनैतिक इतिहास से भली-भांति अवगत कराया और अब हम आपको इस काल की अन्य विशेषताओं से अवगत करायेंगे। इस काल के ऐसे बहुत से अन्य स्रोत हैं जो हमको उस समय की आर्थिक सामाजिक, प्रशासनिक एवं सांस्कृतिक विशेषताओं के विषय में जानकारी उपलब्ध कराते हैं। वे स्रोत इस प्रकार हैं: i) कुछ ऐसे अभिलेख हैं जिनको समकालीन साहित्य एवं विभिन्न प्रकार की धातुओं जैसे कि तांबे की प्लेटें, पत्थर एवं मिट्टी की मोहरों पर लिखा, गया है, ii) विभिन्न वंशों के शासकों द्वारा जारी किये सिक्के, iii) उत्खनन से प्राप्त हुई सामग्री, iv) समकालीन साहित्य और v) फाह्यान जैसे विदेशी यात्रियों के संस्मरण।

इस इकाई में हम आपको गुप्त शासकों के द्वारा अपनायी गयी प्रशासन व्यवस्था के विषय में भी बतलायेंगे। इस इकाई में इस काल की आर्थिक गतिविधियों और राजस्व के विभिन्न स्रोतों का भी वर्णन किया जाएगा।

33.2 गुप्त साम्राज्य के अंतर्गत प्रशासन

हम इकाई 32 में पहले ही बता चुके हैं कि गुप्त शासकों ने उन क्षेत्रों के प्रशासन में कोई हस्तक्षेप नहीं किया जहां के शासकों ने उनके सामन्तीय आधिपत्य को स्वीकार कर लिया था। फिर भी, इसका यह तात्पर्य नहीं है कि गुप्त राजा केवल अपने सामन्तों के माध्यम से शासन करते थे। उनकी अपनी एक सुव्यवस्थित प्रशासनिक व्यवस्था थी जो उन क्षेत्रों में लागू थी जिन पर उनका सीधा-सीधा नियंत्रण था।

33.2.1 राजा

राजा ही प्रशासन का मुख्य आधार था। परन्तु राजतंत्र के चरित्र में महत्वपूर्ण परिवर्तन हो चुके थे। हम पाते हैं कि गुप्त राजाओं ने भारी भरकम उपाधियों को धारण किया था जैसे कि परमभट्टारका, परम-दैवत, चक्रवर्ती, परमेश्वर आदि-आदि। उदाहरण के लिये, समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति में उसके लिये वर्णन हुआ है कि वह, "धनदा (कुबैर), वरूण (समुद्र का देवता), इन्द्र और अन्तका (वाम) जैसे देवताओं के समान था और जिसके समान विश्व में कोई दूसरी विरोधी शक्ति नहीं थी....।" जिस राजा को स्मृति ग्रंथों में दिव्यता का स्तर दिया गया था उसी की भांति पृथ्वी पर गुप्त शासकों को भी देव-तुल्य समझा जाने लगा। कालिदास द्वारा रचित एवं स्मृति साहित्य की भावना के अनुरूप ही स्कन्दगुप्त के भितरी शिलालेख में उसकी तुलना एक ऐसे व्यक्ति के रूप में चित्रित की गई है जिसने "संपूर्ण पृथ्वी को विजित किया और जो पराजित लोगों के प्रति दयालु हो गया, लेकिन इस सबसे वह न तो अभिमानी हुआ और न घमंडी यद्यपि उसकी प्रसिद्धि दिन-प्रति-दिन फ़ैल रही थी।" उसके पिता, कुमारगुप्त ने "धर्म के सत्य मार्ग का अनुसरण किया"। राजा के संबंध में प्रयोग किये गये इन संदर्भों से स्पष्ट है कि यद्यपि राजा के अंतर्गत सर्वोच्च शक्ति निहित थी फिर भी उससे यह अपेक्षा की जाती थी कि वह धर्म के अनुरूप कार्य करे और उसके कुछ निश्चित कर्त्तव्य भी थे:

- यह राजा का कर्त्तव्य था कि युद्ध और शांति के समय में राज्य की नीति को निश्चित करे। जैसे कि स्कन्दगुप्त ने दक्षिणपथ के राजाओं को उनके मूल राज्यों में पुनः स्थापित करने में काफी दूरदर्शिता का परिचय दिया।
- किसी भी आक्रमण से अपने देशवासियों की सुरक्षा करना राजा का मुख्य कर्त्तव्य था।
- युद्ध की स्थिति में राजा सेना का नेतृत्व करता था। इसकी पुष्टि समुद्रगुप्त और चन्द्रगुप्त-II द्वारा किये गये सैनिक अभियानों से भी होती है।
- राजा ब्राह्मणों, श्रामणों और अन्य सब की जिनको उसकी सुरक्षा की आवश्यकता होती थी, मदद करता था।
- वह विद्वानों और धार्मिक लोगों को आश्रय देता था और हर संभव सहायता भी करता था।
- उसके सर्वोच्च न्यायाधीश होने के कारण वह न्याय प्रशासन की देखभाल धार्मिक नियमों एवं विद्यमान रीतियों के अनुरूप ही करता था।
- अपने केन्द्रीय एवं प्रांतीय अधिकारियों की नियुक्ति करना भी उसका कर्त्तव्य था।
- प्रयागप्रशस्ति और कुमारगुप्त-I के "अपरातिधा" किस्म के सिक्कों से स्पष्ट है कि राजा अपने शासन काल में ही अपने उत्तराधिकारी को मनोनीत करता था।

इस काल की एक महत्त्वपूर्ण राजनैतिक घटना यह थी कि वे सभी राजा अपने शासन को अपने-अपने क्षेत्रों में जारी रख सके जिन्होंने गुप्त राजा के सामंतीय आधिपत्य को स्वीकार कर लिया था। और गुप्त राजाओं ने इस प्रकार के क्षेत्रों के प्रशासन में कोई हस्तक्षेप भी नहीं किया।

33.2.2 मंत्रि-परिषद और दूसरे अधिकारीगण

गुप्त अभिलेखों से मंत्रियों की श्रेणीबद्धता के विषय में कोई स्पष्ट सूचना प्राप्त नहीं होती है। परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं है कि गुप्त राजा मंत्रियों से सलाह करते थे और सभी महत्वपूर्ण मामलों पर अपने अधिकारियों को लिखित संदेश जारी करते थे।

मंत्री का पद संभवतः पैतृक था। जैसा कि चन्द्रगुप्त-II का उदयगिरी अभिलेख हमें सूचना देता है कि युद्ध और शांति के मंत्री वीत्सेन ने इसको अपने पैतृक अधिकार के रूप में प्राप्त किया था। यद्यपि सर्वोच्च न्यायिक शक्तियां राजा में निहित थी फिर भी न्यायिक मामलों में उसकी सहायता महादण्डनायक (मुख्य न्यायाधीश) नाम का अधिकारी करता था। प्रांतों में यह कार्य उपारिकों एवं जिला स्तर पर विश्यापतियों द्वारा किया जाता था। गांवों में मामूली मामलों को गांव के मुखिया और बुजुर्गों के द्वारा संपन्न किया जाता था। चीनी यात्री फाह्यन के वृतान्त के अनुसार फांसी का दण्ड बिल्कुल भी नहीं दिया जाता था।

कुछ अन्य भी बड़े अधिकारी थे। जैसे कि महाप्रतिहार महल के रक्षकों का उच्च्व अधिकारी होता था। प्रतिहार अधिकारीगण उत्सवों का आयोजन करते थे और शाही लोगों को उपस्थित रहने की आज्ञा देते थे। प्रारंभिक समय की भांति इस समय भी गुप्तचर प्रणाली अस्तित्व में थी। भूमिदान से संबंधित अभिलेखों में दूतक नाम

के अधिकारियों का विवरण आया है जिनका मुख्य कार्य था कि जो भूमि ब्राह्मणों और अन्य लोगों को दान में दी जाती थी उस दान को लागू करना।

33.2.3 सेना

गुप्त शासकों के पास एक बड़ी सेना का संगठन था। युद्ध के समय सेना का नेतृत्व राजा स्वयं करता था परंतु साधारणतः सेना का एक मंत्री था जिसको संधिविग्राहिका (शांति और युद्ध के अभिभार वाला मंत्री) कहा जाता था। इस मंत्री की सहायता उच्च अधिकारी करते थे। बहुत से अभिलेखों में औपचारिक उपाधि महाबालाधिक्रिता का उपयोग हुआ है। उसके अंतर्गत पिलुपति (हाथियों का प्रमुख), अश्वपति (घोड़ों का प्रमुख), नरपति (पैदल सेना का प्रमुख) जैसे अधिकारीगण कार्य करते थे। सेना को वेतन नकद के रूप में दिया जाता था और इसकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए एक अधिकारी को भी नियुक्त किया गया जिस पर भंडार गृह का अभिभार होता था तथा जिसको रणभण्डारिका कहते थे। इस अधिकारी के अन्य कर्त्तव्य थे कि आक्रमण एवं सुरक्षा के लिये सेना को हथियारों की सप्लाई जारी करना, जैसे कि युद्ध कुल्हाड़ियां, धनुष-कमान, नोकदार भाले, तलवारें, बर्छियां एवं लम्बे नुकीले भाले आदि।

33.2.4 राजस्व प्रशासन

जुर्माने के अतिरिक्त भू-राजस्व राज्य की आमदनी का मुख्य साधन था। समुद्रगुप्त के समय में एक अधिकारी गोपासरमिण का नाम मिलता है जो अक्षापतभाधिक्रिता के रूप में कार्य कर रहा था। इसके विभिन्न प्रकार के कर्त्तव्य थे। यह खातों की देखभाल करता था, यह कर्मचारियों की सुरक्षा निधियों से शाही देनदारी को वसूल करता, कृषि लाभ का निर्धारण करता और अवहेलना या धोखाधड़ी से होने वाली हानि के लिये जुर्माने को वसूल करता था।

दूसरा महत्वपूर्ण उच्च अधिकारी पुस्तपाल (लेखा-जोखा रखने वाला अधिकारी) था। किसी भी लेन-देन को अंकित करने से पूर्व उसकी उचित जानकारी प्राप्त करना उसका कर्त्तव्य था। गुप्त शासकों ने भूमि की उचित जानकारी एवं नाप के लिये एक स्थायी विभाग बनाया हुआ था तथा यही विभाग भू-राजस्व को एकत्रित करने का भी काम करता था। कामन्दक नीतिसार में बताता है कि एक राजा को अपने खजाने की उचित देखभाल करनी चाहिए, क्योंकि राज्य का जीवन पूर्णतः इस पर टिका होता है।

कालिदास एवं नारद-स्मृति के लेखक दोनों यह बताते हैं कि राज्य को कृषि उत्पाद के 1/6 भाग को शाहीराजस्व के लिए प्राप्त करना चाहिए। इनके अतिरिक्त उपरिकर भी था जिसे कपड़े, तेल आदि पर उस समय लगाया जाता था। व्यापारियों के संगठन को व्यापारिक कर (शुल्क) देना होता था। अगर कोई व्यापारी संगठन इसकी अदायगी को रोकता था तो उसके व्यापार करने के अधिकार पत्र को रद्द कर दिया जाता था या उसे अपने मूल व्यापारिक कर का आठ गुना अदा करना होता था। राजा को बेगार कराने का भी अधिकार था जिसको विष्टि, बलि आदि अनेक रूप में किया जाता था। जंगलों एवं शाही भूमि से होने वाली आय को राजा की व्यक्तिगत आय माना जाता था। इसके अतिरिक्त, राजा के कोष को यह अधिकार था कि कुछ बहुमूल्य पदार्थों, वस्तुओं (जैसे कि सिक्कों, आभुषण, अन्य अति महत्वपूर्ण पदार्थों, अकस्मात् जमीन के अंदर से खोजा गया खजाना आदि), खानों की खुदाई एवं नमक निर्माण को भी अपने अधीन कर सकता था।

33.2.5 प्रान्त, जिला और ग्राम

संपूर्ण साम्राज्य को देशों, या राष्ट्रों या भुक्तियों में विभाजित किया गया था। अभिलेखों में हमें कुछ भुक्तियों के नाम भी मिलते हैं। बंगाल में पुण्डवर्द्धन भुक्ति था जिसके अंतर्गत उत्तरी बंगाल का क्षेत्र आता था। तिर-भुक्ति उत्तरी बिहार में था। भुक्तियों पर राजा द्वारा नियुक्त किये गये उपारिकों द्वारा सीधे-सीधे शासन किया जाता था। कुमारगुप्त-I के समय में पश्चिमी मालवा में स्थानीय शासक बन्धवर्मन सहायक शासक के रूप में शासन कर रहा था। लेकिन सौराष्ट्र में पर्णदत्त को स्कन्दगुप्त के द्वारा गवर्नर नियुक्त किया गया था।

प्रांत या भुक्ति को पुनः जिलों या विषयों में विभाजित किया था जो आयुक्तक नामक अधिकारी के अधीन होती था और कहीं-कहीं पर उसे विषयपति भी कहा जाता उसको प्रांतीय गवर्नर के द्वारा नियुक्त किया जाता था। बंगाल से प्राप्त हुए गुप्त अभिलेखों से स्पष्ट है कि जिला कार्यालय (अधिकरण) के अधिकारी स्थानीय बड़े समुदाय के भुक्तियों से ही संबंधित थे। जैसे कि नगरश्रेष्टि (शहर व्यापारी समुदाय के प्रमुख), सर्थवाह (कारवें का नेता) प्रथमा-कुलिक (कारीगर समुदाय का प्रमुख)। इनके अतिरिक्त पुस्तपाल के नाम के भी अधिकारी थे जिनका मुख्य कार्य प्रबंध करना, एवं तथ्यों का रख-रखाव करना था। प्रशासन की सबसे

छोटी इकाई गांव था। ग्राम के मुखिया को ग्रामपति या ग्रामाध्यक्ष कहते थे। बंगाल से प्राप्त हुए गुप्त अभिलेखों से पता लगता है कि प्रशासन की एक इकाई गांव से भी कुछ बड़ी थी। कुछ उदाहरणों से हमें अष्टकुलाधिकरण का संदर्भ मिलता है। विभिन्न श्रेणी वाले गांवों जैसे कि ग्रामिक, कुटुम्बकी, और महत्तर उन कार्यालयों को अपने प्रतिनिधि भेजते थे जो विभिन्न अवसरों पर गांव से उपर के स्तर पर कार्य खेती बाड़ी करने वालों के अतिरिक्त गांव के समाज में अन्य दूसरे लोग भी थे जो बढ़ईगिरी, कताई-बुनाई, बर्तन बनाने, तेल निकालने, सुनारगिरी और बागवानी आदि व्यवसायिक कार्यों को करते थे। ये सभी समूह स्थानीय संस्थाओं एवं संगठनों को बनाते थे जो गांव के मामलों की देखभाल करती थी। ग्रामीण झगड़ों का भी निपटारा इन संस्थाओं के द्वारा ग्राम-वृद्धों या बुजुर्गों की सहायता से किया जाता था।

बोध प्रश्न 1

1) निम्नलिखित में से कौन-कौन कथन सही (√) एवं गलत (×) हैं?

   अ) गुप्त शासकों के अंतर्गत राजा केन्द्रीय शक्ति नहीं रह गया था।

   ब) युद्ध के समय राजा सेना का नेतृत्व करता था।

   स) महादण्डनायक राजस्व का मंत्री था।

   द) उत्पाद का 1/6 भाग शाही राजस्व के लिये वसूला जाता था।

   त) प्रशासन की सर्वोच्च इकाई गांव था।

2) गुप्त शासकों के राजस्व प्रशासन पर लगभग पांच पंक्तियां लिखिए।

....

....

....

....

....

3) राजा की शक्तियों एवं कर्तव्यों के विषय में दस पंक्तियां लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

33.3 अर्थव्यवस्था

आप प्रारम्भ में ही पढ़ चुके हैं कि कृषि के उत्पाद ही प्रमुख संसाधनों का निर्धारण करते थे। जिनका उत्पादन समाज के द्वारा किया जाता था और राज्य के राजस्व का बड़ा भाग कृषि से ही आता था। परंतु

इसका तात्पर्य यह कतई भी नहीं है कि केवल कृषि ही लोगों का व्यवसाय था या लोग केवल गांवों में ही रहते थे। व्यापार एवं दस्तकारी वस्तुओं का उत्पादन जैसे दूसरे व्यवसाय भी थे जो विशेषज्ञ व्यवसाय हो चुके थे। के विभिन्न गुट संलग्न थे। इसका यह तात्पर्य होता है कि, जैसे कि प्रारम्भिक काल में भी हुआ, लोग जंगल, कृषि-आबादी, नगरों एवं शहरों में रहते थे, परन्तु आर्थिक उत्पादन के तरीकों विभिन्न प्रकार के परिवर्तन प्रारम्भ हो चुके थे और जिनके परिणाम स्वरूप समाज के विभिन्न गुटों के सम्बन्धों में भी परिवर्तन हुआ। अब इसके अगले भाग में इन परिवर्तनों पर कुछ प्रकाश डालेंगे।

33.3.1 कृषि

सबसे पहले हम कृषि उत्पादन के प्रतिमान के विषय में लिखेंगे। कृषि उत्पादन का समाज के साथ क्या रिश्ता था, यह गुप्त काल के उन स्रोतों से स्पष्ट है जिनमें कृषि सम्बन्धी क्रिया कलापों के बहुत से पक्षों का विवरण किया गया है। अभिलेखों में कई किस्म की भूमि की चर्चा है: जैसे कि जिस भूमि पर खेती की जाती थी उसको क्षेत्र कहा गया है। जो भूमि कृषि योग्य नहीं होती थी उसका खिला, अपरहत आदि नामों से जाना जाता था। और अभिलेखों से यह भी संकेत मिलता है कि खेती न की जाने वाली भूमि को लगातार खेती करने के अनार्जन लाया जाता था। भूमि का उसकी किस्म, उर्वरकता और उपयोगिता के आधार पर कोई वर्गीकरण गुप्त काल में किया गया हो, इसके प्रमाण नहीं मिलते। भूमि की नाप के लिये विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न तौर तरीकों को अपनाया गया, इसके बावजूद भी यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि अमुक नाप वास्तव में क्या इंगित करती है। कुछ क्षेत्रों में भूमि की नाप के लिये निवार्तन प्रणाली का उपयोग किया गया है जबकि बंगाल से प्राप्त अभिलेखों से प्राप्त भूमि के क्षेत्र को नापने के लिये कुलयावाष और द्रोणवाद प्रणालियों का प्रयोग किया गया। फसलों के उत्पादन के अनुसार भी क्षेत्रों का निर्धारण करना सम्भव नहीं है। लेकिन बड़ी श्रेणियों की अन्न से सम्बन्धित फसलों जैसे कि जौ, गेंहू और धान, विभिन्न किस्म की दालें एवं चना और सब्जियों तथा इन्हीं की तरह नकदी फसलें जैसे कि कपास और गन्ना की पैदावार के विषय में हम गुप्त काल के पर्व से भी जानते हैं औरं इनकी पैदावार इस काल के पूर्व से भी जानते हैं और इनकी पैदावार इस काल में भी जारी थी। लेकिन इससे यह नहीं समझा जाना चाहिये कि गुप्त काल में किसानों को मक्का जैसे अनाज की फसल आलू एवं टमाटर जैसी सब्जियों की जानकारी थी।

कृषि-उत्पाद समाज के लिये कितना आवश्यक था इसकी पुष्टि इस तथ्य से भी होती है कि इस समय सिंचाई को कितना अधिक महत्व दिया गया था। प्रारंभिक खण्डों में आपने गुजरात सौराष्ट्र क्षेत्र में स्थित सुदर्शन झील (तड़ा) के विषय में पढ़ा। मूलरूप से इस झील का निर्माण मौर्यकाल के दौरान किया गया था। इस झील की पुनः मरम्मत तब की गई थी जबकि पूर्णतः क्षतिग्रस्त हो गई थी। यह स्कन्दगुप्त के समय फिर क्षतिग्रस्त हो गई और उसके नव-नियुक्त सौराष्ट्र के गवर्नर पर्णदत्त और बाद में पर्णदत्त के पुत्र चक्र पतिता ने पुनः इसकी मरम्मत करायी। सिंचाई के दूसरे साधन कुंए थे और सुव्यवस्थित ढंग से निर्मित नालियों की सहायता से इन कुंओं के द्वारा खेतों की सिंचाई की जाती थी। संभवतः गुप्त काल से भी पूर्व इस संबंध में एक यांत्रिकी जानकारी उपलब्ध थी, जिसके अनुसार कुछ बर्तनों की एक जंजीर होती थी और इस जंजीर को नीचे पानी के तल तक पहुंचाया जाता और इन बर्तनों की जंजीर को नीचे से भरकर निकाल कर खाली कर दिया जाता। इसकी इस प्रकार से व्यवस्था की गई थी कि ये बर्तन पानी से भरकर जंजीर के द्वारा लगातार बाहर आते रहे और खाली होते रहे। सिंचाई करने के लिये अपनाये गये इस तरीके को घाटी-यंत्र के नाम जाना जाता था क्योंकि घाटी शब्द का प्रयोग इस बर्तन के लिये किया गया। इस प्रकार के यंत्र को अशघाट के नाम से भी जाना गया। सातवीं सदी ई. में बाण भट्ट के द्वारा रचित पुस्तक हर्षचरित में खेतों की सिंचाई का बड़ा ही रोचक वर्णन है उसमें वर्णित है कि किसी प्रकार के गन्ने की फसलों की किस भांति से घाटी-यंत्र के द्वारा सिंचाई की जाती थी। बंगाल जैसे क्षेत्रों में वर्षा के पानी को गढ्ढों आदि में संग्रहित किया जाता था और प्रायद्वीपीय भारत में तालाब से सिंचाई करने की प्रथा सामान्य बात हो गई थी। इस प्रकार सिंचाई के लिये विभिन्न प्रकार की प्रणालियों का प्रचलन था और किसानों को सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराने में राज्य का मामूली योगदान ही था। इसके बावजूद भी किसान सिंचाई के लिए मुख्य रूप से वर्षा पर ही निर्भर करते थे और इसी कारणवश न केवल कौटिल्य के अर्थशास्त्र में बल्कि गुप्त काल में लिखे गये अन्य ग्रंथों में भी वर्षा के महत्व के विषय में लिखा गया है।

गुप्त काल के स्रोतों से पता लगता है कि इस समय में कृषि समाज में कुछ निश्चित महत्वपूर्ण परिवर्तन हो रहे थे। गुप्त काल के कुछ ऐसे अभिलेख प्राप्त हुए हैं जिनके अनुसार कुछ लोगों ने भूमि को नकद खरीदकर फिर इस खरीदी गई भूमि को इन लोगों ने उन ब्राह्मणों को भेंट कर दिया जिनसे आशा की गई थी कि वे उनके लिए वैदिक बलि का आयोजन करेंगे या कई बार इस प्रकार की भूमि जैन या बौद्ध मठों को भी दान में दिया गया। अब न केवल भूमि को खरीदा और दान में दिया जाने लगा बल्कि धार्मिक लोगों को भूमि को दान में या भेंट में देना एक सामान्य प्रथा बन गई। इसके अतिरिक्त जो अधिकारी गण किसी न किसी रूप

में शासकों की सेवा में लगे थे उनको भी अपनी सेवा के बदले में भूमि के बड़े-बड़े टुकड़े प्राप्त होने लगे। यद्यपि यह कोई पूर्णतः नयी बात नहीं थी। इस समय में शासक परिवारों की संख्या में बड़ी तेजी के साथ वृद्धि हुई जिसके कारण भूमि को प्राप्त करने वालों की संख्या में भी वृद्धि हुई परन्तु उस पर खेती-बाड़ी का कार्य वे स्वयं नहीं करते थे। भूमि दान करने वालों की भूरि-भूरि प्रशंसा की गई और जो कोई दान की गई भूमि को ग्रहण करता था उसके लिए भयंकर परिणामों की धमकी दी जाती थी। इन सब का अन्ततः यह परिणाम हुआ कि समाज में एक ऐसे वर्ग की उत्पत्ति हुई जिसको भूमि पर उच्च स्वामित्व के अधिकार प्राप्त हो गये और समाज में उसका संबंध उच्च वर्ण के साथ होने के कारण उसको उच्च अर्थिक एवं सामाजिक दर्जा प्राप्त हुआ। यद्यपि यह भी सत्य है कि भूमि के मालिकाना अधिकार उन्हीं को ही नहीं थे जिन्होंने भूमि को दान में प्राप्त किया था। गुप्त अभिलेखों में ऐसे विभिन्न ग्रामवासियों को उद्धृत किया गया है जैसे कि ग्रामिका, कुटुम्बिका और महत्तर जिनका ग्रामीण भूमि पर अधिकार था और इनके भूमि के लेन-देन में संलग्न होने से यह स्पष्ट है कि वे भी ग्रामीण समाज के महत्वपूर्ण सदस्य थे।

शासकों से भूमि प्राप्त करने वालों और गांवों के प्रभावशाली भूमि स्वामियों के वर्गों के साथ साधारण किसानों की तुलना करने पर हम पाते हैं कि इन साधारण कृषकों की दशा बड़ी खराब रही होगी। कुछ इतिहासकारों का ऐसा मानना है कि भूमि दान की प्रथा के कारण संपूर्ण किसान आबादी का स्तर सामाज में काफी नीचे गिर गया था। परन्तु यह पूर्णतः सत्य नहीं है ये छोटे-छोटे किसान ही थे जिनको विभिन्न नामों जैसे कि कृषिवाला, कृषक, या किनसा आदि नामों से जाना जाता था और जिनका सामाजिक एवं आर्थिक स्तर निम्न था। वास्तविक खेती करने वाले लोगों के बीच एक ऐसा भी वर्ग था जो केवल दूसरों की जमीन पर खेती करता था और उसके बदले में उसका उत्पाद का एक भाग प्राप्त होता था। इस समय में दासों का भी प्रचलन था जो अपने स्वामी के खेतों में काम करते थे। घरेलू महिला दासों के साथ क्रूरता का व्यवहार किया जाता था और हमें कामसूत्र से पता लगता है जो संभवतः गुप्त काल में ही लिखा गया कि किस प्रकार से अपने स्वामियों के द्वारा इन महिला दासों का उत्पीड़न किया जाता था।

साधारण किसान की हालत क्यों खराब हुई इसके दूसरे अन्य भी कारण थे। एक यह भी था कि कई सारे क्षेत्रों में छोटे-छोटे राज्यों का उद्भव हुआ। इन राज्यों के नये-नये शासकों, अधिकारियों और जनता के कुछ ऐसे लोगों ने जो कृषि कार्यों में भाग नहीं लेते थे समाज में असमानता को पैदा किया और वास्तविक खेती-बाड़ी करने वालों पर इन्होंने और अधिक भार डाल दिया। इस काल में उत्पादन करने वालों पर राज्य के द्वारा लगाये जाने वाले करों में और अधिक वृद्धि हो गई। इस काल में विष्टि या बेगार में और अधिक वृद्धि हुई यद्यपि हम को यह स्पष्ट जानकारी नहीं है कि कृषि वृद्धि उत्पादन के लिए कितनी आवश्यक थी। कुल मिलाकर इस काल में पहले की अपेक्षाकृत साधारण किसान की दशा और भी बिगड़ गई।

33.3.2 दस्तकारी उत्पादन और व्यापार

दस्तकारी उत्पादन के अन्तर्गत अनेक वस्तुयें आती थी। इसके अन्तर्गत घरेलू उपयोग की वस्तुयें जैसे कि मिट्टी के बर्तन फर्नीचर की चीजें, टोकरियां, घरेलू उपयोग के लिए धातु के औजार आदि-आदि आती थीं। और इसी के साथ-साथ विलासिता की वस्तुयें भी दस्तकारी उत्पादन के अन्तर्गत आती थीं जैसे कि सोने, चांदी एवं मूल्यवान पत्थरों से बने आभूषण, हाथी दांत की बनी चीजें, शानदार किस्म के सूती एवं रेशमी कपड़े और वे महंगी वस्तुएं जिनका उपयोग समाज के संपन्न लोग करते थे। इनमें से कुछ वस्तुओं को व्यापार के माध्यम से उपलब्ध कराया जाता था तो कुछ का स्थानीय स्तर पर उत्पादन भी किया जाता। उत्खनून के द्वारा जो वस्तुएं प्राप्त हुई हैं उनमें विलासिता की वस्तुएं नहीं मिली है परन्तु इन वस्तुओं का विवरण साहित्यिक ग्रंथों और अभिलेखों में पाया जाता है। इन स्रोतों में विभिन्न श्रेणियों के दस्तकारों का भी उल्लेख हुआ है। उदाहरण के लिए इस काल के विभिन्न ग्रंथों में भिन्न-भिन्न प्रकार के रेशमी कपड़ों का उल्लेख है और जिनका क्षोम और पत्रावस्त्र के नाम दिये गये हैं। पश्चिमी मालवा मंदसौर से प्राप्त एक अभिलेख में रेशम के कपड़े बनाने वालों की एक श्रेणी का उल्लेख है जो गुजरात प्रदेश को छोड़कर मालवा के क्षेत्र में आकर बस गये थे। अमरकोष और ब्रिहत स्मृति जैसे ग्रंथों में जो संभवतः गुप्त काल में लिखे गये थे, संस्कृत भाषा में ऐसी बहुत सी वस्तुओं के नाम दिये गये हैं और इसी के साथ-साथ इन ग्रंथों में उन दस्तकारों की कई श्रेणियों का उल्लेख हुआ है जो इनका निर्माण करते थे।

इस काल में निर्मित की जाने वाली वस्तुओं की मात्रा एवं किस्मों को जानने के लिये खुदाई वाले स्थलों से पायी जाने वाली वस्तुओं का अध्ययन करना होगा। बहुत से महत्वपूर्ण स्थानों से जैसे कि तक्षशिला अहिछत्र, मथुरा, राजघाट, और गंगा घाटी में स्थित पाटलिपुत्र तथा दूसरे भौगोलिक क्षेत्रों में स्थित प्राचीन स्थलों की खुदाई से मिट्टी के मृद भांड, परिकोठे, विभिन्न प्रकार के पत्थरों की मालाएं कांच की वस्तुयें, धातु की बनी वस्तुएं आदि प्राचीन दस्तकारी के उत्पादन प्राप्त हुए हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि अगर गुप्त काल की

दस्तकारी वस्तुओं की तुलना शक एवं कुषाण काल में बनी दस्तकारी वस्तुओं के साथ की जाये, तो गुप्त काल में दस्तकारी का कुछ ह्रास हुआ। परन्तु इस दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए अभी इन दोनों कालों का तुलनात्मक अध्ययन करना संभव नहीं है।

सभी वस्तुयें सभी स्थानों पर उपलब्ध नहीं होती थी इसलिये पहले समय की भांति ही व्यापार के द्वारा ही ये वस्तुयें एक स्थान से दूसरे स्थान को पहुंचती थी। आप खंड 6 एवं खंड 7 में पहले ही पढ़ चुके हैं कि भारत के केन्द्रीय, पश्चिमी और दक्षिण-पूर्वी एशिया एवं रोम साम्राज्य के साथ परवर्ती काल से घनिष्ठ व्यापारिक सम्पर्क था और देश के अन्दर भी कई सदियों में विभिन्न क्षेत्रों के बीच व्यापारिक मार्ग विकसित हुए थे। इसके भी पर्याप्त प्रमाण हैं कि गुप्त काल में भी ये व्यापारिक गतिविधियां जारी थीं। अपने परवर्ती कुषाण शासकों की भांति गुप्त राजाओं ने भी विभिन्न प्रकार के सिक्कों को जारी किया और गुप्त शासकों के सोने के सिक्के सर्वश्रेष्ठ दस्तकारी के नमूने हैं। गुप्त शासकों ने चांदी, तांबे एवं सीसे के सिक्कों को भी जारी किया। गुप्त साम्राज्य के कुछ क्षेत्रों में इन सिक्कों को समाज में उच्च स्थान प्राप्त था। उदाहरणार्थ, उत्तरी बंगाल के जिला मुख्यालय के साथ दो व्यापारिक प्रतिनिधि नगरश्रेष्ठि और सर्थवाहा संबंधित थे। उत्तरी बिहार में वैशाली से प्राप्त गुप्त शासकों की मोहर से पता लगता है कि वैशाली नगर की जनसंख्या में व्यापारिक समुदाय का महत्वपूर्ण स्थान था। इस समय के साहित्यिक ग्रन्थों से स्पष्ट है कि पाटलिपुत्र एवं उज्जैनी जैसे नगरों में व्यापक स्तर पर व्यापारिक गतिविधियाँ होती रहती थीं और इन नगरों में विभिन्न देशों के लोग उपस्थित रहते थे। व्यापारिक लोग इन नगरों में महत्वपूर्ण समुदाय थे।

इन नगरों में दस्तकारों और व्यापारियों के कार्यों को सुविधापूर्वक चलाने के लिये इनके अपने संगठन थे। इन संगठनों के लिये जो प्राचीन शब्द प्रयोग किया जाता था, उसको श्रेणी कहते थे। राज्य इन श्रेणियों को सुरक्षा प्रदान करता था और इनके नियमों एवं रीतियों का उचित सम्मान किया जाता था। इसी प्रकार श्रेणियों के सदस्यों से वह आशा की जाती थी कि वे भी इन संगठनों के नियमों का पालन करें अन्यथा अवेहलना करने पर उनको दण्ड दिया जाता। श्रेणी शब्द को व्यापारियों एवं दस्तकारों के संगठन रूप में परिभाषित किया गया है परन्तु इस शब्द की अन्य परिभाषायें भी दी गई हैं और इसका विस्तृत अध्ययन भी किया गया है परन्तु हम अभी भी निश्चय के साथ यह नहीं कह सकते कि इस शब्द का वास्तविक अर्थ क्या था।

यदि गुप्त काल में दस्तकारी का काम और व्यापार काफी सक्रिय था परन्तु इस संदर्भ में दो तथ्यों को विशेष कर याद रखना चाहियेः

1) उस समय कई प्रकार के दस्तकार लोग थे परन्तु उनकी न तो आर्थिक संपन्नता के रूप में कोई पहिचान थी और न ही सामाजिक स्तर के रूप में। उदाहरणार्थ, सुनार और उसके परिवार जिसकी दुकान उज्जैनी में थी और गांव के लुहार परिवारों के मध्य काफी अंतर था। यह अंतर उन धर्मशास्त्रों से भी स्पष्ट होता है जिनको ब्राह्मणों ने लिखा था। धर्मशास्त्रों में दस्तकारों के विभिन्न वर्गों का स्पष्ट उल्लेख है परन्तु फिर भी समाज में उनका स्थान ब्राह्मणों, कायस्थों एवं वैश्यों से नीचा था। धर्मशास्त्रों में यह भी कहा गया है कि प्रत्येक दस्तकार गुट से एक जाति बनती थी जैसे कि बर्तन बनाने वाले दस्तकारों, से कुम्हार जाति बनी तथा स्वर्णकारों या सुनारों से एक दूसरी जाति की उत्पत्ति हुई और इस प्रकार से इन दस्तकार समूहों से उनकी अनेक जातियां बनी। यद्यपि जाति व्यवस्था इतनी सरल नहीं थी इसके बावजूद जो जिस प्रकार की दस्तकारी का काम करता था उन लोगों को उसी प्रकार की जाति बनी।

2) कुछ क्षेत्रों में गुप्त शासकों के काल में ही संभवतः दस्तकारी उत्पादन एवं व्यापारिक गतिविधियों का ह्रास होना प्रारंभ हो गया था और कुछ इतिहासकारों का मानना है कि इसी के साथ-साथ नगरों एवं शहरों का भी पतन प्रारंभ हो गया। जिसके कारण समाज की निर्भरता कृषि-उत्पादन पर और अधिक बढ़ने लगी। इन परिवर्तनों के विषय में आपको अधिक जानकारी खंड 9 में प्राप्त होगी।

बोध प्रश्न 2

1) रिक्त स्थानों को भरिये।

अ) खेती-बाड़ी की जाने वाली भूमि को .... (खिला/क्षेत्र) कहा जाता था।

ब) धार्मिक दान प्राप्तकर्त्ताओं को भूमि उपहार स्वरूप देने की परंपरा .... (प्रथम सदी ई./ पांचवी-छठी सदी ई.) .... में सामान्य (हो चुकी थी/बिल्कुल भी नहीं थी)।

स) इस काल के दौरान छोटे जोतदार .... (काफी फले-फूले/कम हुए)।

द) (स्कन्दगुप्त/परूगप्त) .... के शासन काल में सुदर्शन झील की मरम्मत की गई।

2) इस काल में सिंचाई के लिये अपनाये गये तरीकों के विषय में लगभग 10 पंक्तियां लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

3) उन स्रोतों का विवरण लगभग पांच पंक्तियों में कीजिये जिनमें दस्तकारी एवं दस्तकारों का उल्लेख हुआ हो।

....

....

....

....

....

33.4 समाज

आप पहले ही पढ़ चुके हैं कि ब्राह्मणों ने जिस समाज की कल्पना की थी, उस समाज को चार वर्गों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र) में इस ढंग से विभाजित किया गया था कि प्रत्येक वर्ण उन कार्यों को सम्पन्न करे जो उसके लिये निर्धारित किये गये थे और केवल वह उन्हीं अधिकारों का उपभोग करे जो उसके लिये बताये गये। यह आदर्श सामाजिक व्यवस्था थी और राज्य से यह आशा की गयी कि वह इसको सुरक्षित रखे। इसका अर्थ यह हुआ कि देश के किसी भी कोने में जब कभी भी किसी छोटे राज्य का उदय हुआ तो उसके राज्य से यह अपेक्षा की जाती थी कि वह इसकी मान्यता एक आदर्श समाज व्यवस्था के रूप में करे। गुप्त काल से ही ब्राह्मण लोग राजा पर काफी प्रभाव डालने लगे थे यह इससे भी स्पष्ट है जिस ढंग से वे राजाओं व दूसरों से भूमि को उपहार के रूप में प्राप्त करने लगे थे। राजाओं एवं अधिकारियों ने न केवल ब्राह्मणों को व्यक्तिगत स्तर भूमि को उपहार स्वरूप भेंट किया बल्कि ब्राह्मणों के बड़े-बड़े समूहों को दूर-दराज के क्षेत्रों में भी बसाया गया। इस प्रकार, बहुत सी ब्राह्मण बस्तियों को ब्रह्मादिय अग्रहर कहा जाने लगा और उनकी संख्या भी बढ़ने लगी। दूसरी अन्य बातों के साथ-साथ, उन्होंने वर्ण विभाजित समाज व्यवस्था के विचार को भी फैलना प्रारंभ कर दिया।

वर्ण व्यवस्था के आदर्श व्यवस्था होने के बावजूद समाज में ऐसे बहुत से गुट थे जिनकी पहिचान को वर्ण व्यवस्था के विचार द्वारा निश्चित नहीं किया जा सकता। दूसरे, ऐसा समझा गया था कि विभिन्न वर्ण अपने-अपने कर्त्तव्यों का पालन करेंगे परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं किया जा सका। परन्तु वास्तविक समाज में आदर्श समाज से मूलभूत अंतर होता है और इस अंतर को धर्मशास्त्रों के ब्राह्मण लेखकों ने भी रेखांकित किया। इसलिये उन्होंने विभिन्न जातियों की समाज में स्थिति निश्चित करने के लिये इन जातियों की उत्पत्तियों के संबंध में झूठी व्याख्यायें प्रस्तुत की। उनका कहना है कि बहुत सी जातियों और गुटों की उत्पत्ति बहुत से वर्णों के आपसी वर्ण-संस्कारों या उनमें आंतरिक विवाहों के कारण हुई। गुप्त काल से पूर्व के यूनानी या सीथियन विदेशी शासक परिवारों से संबंधित लोगों को सहायक-क्षत्रिय का स्तर (व्रत्य-क्षत्रिय) प्रदान कर दिया गया था क्योंकि उनकी उत्पत्ति को शुद्ध क्षत्रियों में नहीं माना गया। इसी भांति से उन कबिलाई गुटों की उत्पत्तियों के विषय में भी झूठी व्याख्यायें दी गई जिन्होंने ब्राह्मणिक सामाजिक व्यवस्था को अंगीकार कर लिया था।

धर्मशास्त्रों में अपधर्म की बात की गई है अर्थात् दरिद्रता के समय में जो व्यवहार किया जाता। इसका अर्थ यह हुआ कि जब भी आवश्यक हो वर्ण उन कार्यो एवं कर्त्तव्यों को भी कर सकते थे जिनको उनके लिये आवंटित नहीं किया गया था। इस प्रकार धर्मशास्त्रों के अनुसार भी वास्तविक समाज उनके द्वारा कल्पित किये गये आदर्श समाज से भिन्न था। इन परिवर्तनों का प्रारंभ गुप्त काल से काफी पहले प्रारंभ हो चुका था, परन्तु ब्राह्मणिक समाज की अवधारणा का देश के अन्य भागों में प्रचार हो जाने के कारण सामाजिक व्यवस्था काफी जटिल हो गई थी। इस नवीन सामाजिक व्यवस्था में बहुत से सामाजिक गुट समाहित हो चुके थे परन्तु एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में वास्तविक समाज व्यवस्था भिन्न-भिन्न थी, फिर भी इनमें कुछ निश्चित विचार सामान्य रूप से व्याप्त थे:

- ब्राह्मणों की पहिचान समाज के सबसे श्रेष्ठतम वर्ग के रूप में की गई इसलिये उनको उच्चतम वर्ण में रखा गया। ये लोग संस्कृत भाषा को भली-भांति जानते थे और धार्मिक अनुष्ठानों को पूर्ण करते थे जिसके कारण उनके राज सत्ता के साथ निकटतम संबंध कायम हो गये। स्थिति यह थी कि जब राजा बौद्ध, जैन एवं अन्य विशेष धर्मों के समर्थक थे तब भी उन्होंने ब्राह्मणों को संरक्षण प्रदान किया जो विशेष विद्वान थे। इसी के कारण ब्राह्मण लोग आर्थिक रूप से सम्पन्न एवं सम्मानीय थे।

- सैद्धान्तिक तौर पर समाज चार वर्णो में विभाजित था, परन्तु ऐसे बहुत से गुट थे जो इस योजना से बाहर थे। वे अत्यंजा या अछूत थे। उनको अशुद्ध माना गया, अगर कोई उनसे छू जाता तो वह भी अशुद्ध हो जाता और जिन इलाकों में उच्च वर्ण के लोग रहते थे उन इलाकों में उनके आवागमन को मना कर दिया जाता था। चण्डाल और चर्मकार जैसे गुटों को अपवित्र माना गया और जाति व्यवस्था से बाहर रखा गया। इस प्रकार हम देखते हैं कि ब्राह्मणिक सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत अनेक सामाजिक गुटों की हालत सदैव दरिद्र बनी रही।

- उच्च वर्गों की महिला वर्ग की हालत भी नीची थी। इस काल में भी वाकाटक रानी प्रभावती गुप्त जैसी महिलाओं के पास काफी शक्ति थी, परन्तु सभी महिलाओं को यह विशेषाधिकार प्राप्त नहीं थे। ब्राह्मण ग्रंथों मे महिलाओं के अनुसरण करने योग्य नियमों का उल्लेख किया गया था। और उनसे आशा की जाती थी कि वे उनका अनुसरण करेंगे और वे परिवार में आदर्श पत्नियां एवं मातायें बनेंगी। कुछ ब्राह्मण ग्रंथों में महिलाओं की सामाजिक स्थिति को शूद्रों के समक्ष ही माना गया है। यह भी तथ्य महत्वपूर्ण है कि ब्राह्मणों को लगातार भूमि को दान में दिया गया परन्तु हमें इसका प्रमाण उपलब्ध नहीं होता है कि ब्राह्मण महिलाओं को कभी भी भूमि प्रदान की गई हो।

सामाजिक जीवन का एक दूसरा पक्ष भी है कि नगरों में रहने सम्पन्न लोगों और ग्रामवासियों की जीवन शैली में काफी अंतर था। नगरों में रहने वाले आदर्श लोगों को नगरक कहा जाता था जिसका तात्पर्य यह हुआ कि उनका जीवन सम्पन्न था और वे खुशहाल एवं शानदार सभ्य जीवन व्यतीत करते थे। इस प्रकार के जीवन का विवरण न केवल वात्स्यायन के कामसूत्र ग्रंथ में मिलता है बल्कि इस काल के अन्य साहित्यिक ग्रंथों में भी हुआ है। इसके बावजूद भी यह समझना गलत होगा कि नगरों में रहने वाले सभी लोग इस भांति के जीवन को व्यतीत करने में सक्षम थे।

बोध प्रश्न 3

1) निम्नलिखित कथनों में से कौन-सा सही (√) और कौन-सा गलत (×) है?

   अ) गुप्त काल से राजाओं पर ब्राह्मणों का काफी प्रभाव बनने लगा था।

   ब) गुप्त काल में वास्तविक समाज, आदर्श समाज से भिन्न था।

   स) अन्तयाज वर्ण व्यवस्था की सबसे ऊंची इकाई थी।

   द) नगरों में रहने वाले लोगों और गांव में रहने वालों का जीवन समान था।

2) वर्ण व्यवस्था में होने वाले परिवर्तनों का विवरण दस पंक्तियों मे कीजिये।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

....

....

....

....

....

33.5 सारांश

इस इकाई में गुप्त प्रशासन, अर्थव्यवस्था और समाज के विभिन्न पक्षों का विश्लेषण करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि गुप्त काल में परवर्ती काल की अपेक्षा काफी महत्वपूर्ण परिवर्तन हो चुके थे। एक महत्वपूर्ण पक्ष राजतन्त्र से संबंधित है कि जिन क्षेत्रों के राजाओं ने, गुप्त राजाओं के सामन्तीय अधिपत्य को स्वीकार कर लिया था, उनका शासन उन क्षेत्रों में जारी रहा। कृषि उत्पादन पर भी पर्याप्त ध्यान केन्द्रित किया गया और इसकी पुष्टि इस बात से भी होती है कि इस काल में सिंचाई ने प्रमुखता प्राप्त कर ली थी। भूमि को उपहार स्वरूप धार्मिक वर्गों को देने की प्रथा का प्रचलन सामान्य बात हो गयी थी और ब्राह्मण लोग राजाओं पर अपना काफी प्रभाव डालने लगे। कृषि करने वाले लोगों के बीच काफी भिन्नतायें उत्पन्न हो गई और अगर इनकी तुलना सम्पन्न लोगों के साथ की जाये तो हम पाते हैं कि साधारण किसान की हालत में काफी गिरावट आयी। इसी के समान ही विभिन्न किस्म के दस्तकारों के आर्थिक एवं सामाजिक स्तरों में भिन्नतायें थी। यद्यपि इस काल में भी व्यापारिक गतिविधियां जारी रही परन्तु दस्तकारी उत्पादन में कमी हुई। समाज में वर्ण व्यवस्था जारी रही परन्तु इसी के साथ-साथ बहुत से सामाजिक गुटों या समूहों विशेषकर अछूतों को वर्ण व्यवस्था से बाहर रखा गया। समाज में महिलाओं की स्थिति में भी पर्याप्त गिरावट आयी।

33.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) अ) × ब) √ स) × द) √ त) ×

2) कृपया उप-भाग 33.2.4 को देखें।

3) अपने उत्तर का आधार उप-भाग 33.2.1 को बनायें।

बोध प्रश्न 2

1) अ) क्षेत्र ब) हो गया, पांचवी-छठी सदी ई. स) कम होना द) स्कन्दगुप्त

2) अपने उत्तर का आधार उप-भाग 33.3.1 को बनायें।

3) अपने उत्तर की तुलना उपभाग 33.3.2 के प्रथम व दूसरे पैराग्राफ से करें।

बोध प्रश्न 3

1) अ) √ ब) √ स) × द) ×

2) अपना उत्तर भाग 33.4 को पढ़कर दें।